P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

वैश्वीकरण, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और जेन्डर विमर्श का बढ़ता दायरा

सत्येन्द्र कुमार
शोध–छात्र,
राजनीति विज्ञान विभाग,
बी.आ.ए.बिहार विश्वविद्यालय,
मुजफ्फरपुर, बिहार, भारत

सारांश

महिला सशक्तिकरण समसामयिक विषयों में सबसे प्रचलित एवं प्रगतिशील विषय है। वैश्वीकरण के युग में महिलाओं का अधिकार, स्वतंत्रता, समानता एवं सम्मान आदि के क्षेत्रों में राष्ट्रीय स्तर पर ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आवाज प्रबल हो रहे हैं। समाज के रूढ़ीवादी सोच से आगे निकलकर महिलाएँ सार्वजनिक क्षेत्रों, निजी संस्थानों, स्वरोजगारों, एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में बेखौफ आना जाना, अपनी पसंद ना पसंद के विषय में निर्णय लेना जैसे कार्यों को अंजाम दे रही है। राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के मानवाधिकार सुरक्षित रहे इसके लिए मानवाधिकार आयोग सराहनीय पहल कर रही है लेकिन इसके विपरीत वैश्वीकरण ने महिलाओं को एक बाजार के वस्तु के रूप में भी प्रस्तुत किया है। महिलाओं को शोषण, यौन उत्पीड़न, वेश्यावृति, घरेलू हिंसा आदि कई गुणा बढ़ गये हैं जिससे महिलाएँ कहीं–न–कहीं अपने आप को असुरक्षित महसूस कर रही हैं।

मुख्य शब्द : सशक्तिकरण, वैश्वीकरण, संयुक्त राष्ट्र संघ, मानवाधिकार, महिलाओं पर हिंसा, समानता, उपभोक्तावादी संस्कृति, शोषण, निजीकरण, व्यक्तिवाद।

प्रस्तावना

वैश्वीकरण ने महिलाओं को वे तमाम चीजें मुहैया करा दी है। जिनसे उन्हें आज तक वंचित रखा गया था तथा जो थोड़ी–बहुत कसर है, आने वाले दिनों में उसकी भी पूर्ति हो जाएगी। आज वैश्वीकरण के दौर में महिला सशक्तिकरण का विचार उभरकर सामने आया है। आज महिलाएँ राजनीति में सक्रिय भागदारी के साथ–साथ कारखानों एवं फैक्ट्रियों में भी काम कर रही हैं। फिल्म, मॉडलिंग, टीवी सीरियल, रेडियो के एफएम चैनालों पर रेडियों जॉकी, समाचार चैनलों, पॉप संगीत, विज्ञान, सौदर्य प्रतियोगिताओं आदि सभी जगह छायी हुई है। शासन में भी वे बड़े पदों को धारण कर रही हैं तथा प्रबंधन क्षमता तो ऐसी है कि उन्हें अपनी ओर आकर्षित करने के लिए निगमों के बीच एक होड़ सी मची हुई है। इस प्रकार बाजार के पैरवीकार महिलाओं के आजादी की तुरही बजानी शुरू कर दी है। बाजार ने उन्हें घर की चाहर–दिवारी से बाहर निकाल कर आजादी का रसादवादन करवाया है। लेकिन महिला सशक्तिकरण के इस वैश्वीकरण अभियान का एक दूसरा पहलू भी है जो कहीं अधिक भयावह प्रतीत होता है। यह पहलू यह सिद्ध करता है कि इस वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने उन्हें अतीत के किसी भी कालावधि के मुकाबले अधिक निर्ममता और संपूर्णता से एक बाजार में बिकने के लिए तैयार एक वस्तु में बदल दिया है। आज वैश्वीकरण के इस युग में स्थिति यह है कि महिलाओं का बड़े पैमाने पर आयात–निर्यात हो रहा है एवं औरतों के इस आयात–निर्यात के जरिए अरबों–खरबों डालर की रकम कमायी जा रही है।[1] प्रस्तुत आलेख सेंटर फॉर जेंडर स्टडीज पटना बिहार (इंडिया) इंटरनेशनल कन्फ्रेंस ऑन ''जेंडार इश्यू : प्रायोरिटीज एन्ड चैलेंजेज'' 17–19 नवम्बर (2017) प्रस्तुत पत्र का अद्यतन एवं परिष्कृत पत्र है।

प्रारंभ से ही महिलाओं के अधिकारों की उन्नति संयुक्त राष्ट्र संघ की प्राथमिकताओं में से एक प्राथमिकता रही है। दिसम्बर, 1993 से पहले जब संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने महिलाओं के विरूद्ध हिंसा की समाप्ति की घोषणा की थी, तब वैश्विक समुदाय महिलाओं के प्रति तेजी से बढ़ती हिंसा के प्रति सचेत नहीं था। प्रारंभिक समय में, अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून और महिलाओं से संबंधित मुद्दों के परस्पर संबंध रचनात्मक नहीं थे इसीलिए

मानवाधिकारों के कानून नारीवादियों की आलोचनाओं का शिकार होते रहे हैं। नारीवादियों का तर्क है कि ऐसे कानून अपनी प्रकृति में व्यक्तिवादी होते हैं और राज्य के साथ चलते हैं इन कानूनों की रूपरेखा और अपील पुरूषों से संबंधित विषयों पर केवल दिखाया जाता है।[2]

संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रावधान 48/104 (1993) के अनुसार महिलाओं पर हिंसा प्रयोग को मानवाधिकारों का हनन माना गया है। इस हिंसा को महिलाओं का शारीरिक, लैंगिक और मनोवैज्ञानिक उत्पीड़न जिसमें हिंसा की धमकी भी शामिल है, निजी या सार्वजनिक जीवन में स्वतंत्रता से वंचित करने का मानवाधिकार का हनन माना जाता है। लिंग आधारित सामाजिक भेदभाव के कारण ही महिलाओं के विरूद्ध हिंसा प्रयोग को रोकने के लिए एक रेपोर्टियर की स्थापना की गई। भारत महिला संबंधी प्रसंविदा का सदस्य 1993 से है। प्रसंविदा के अनुसार महिलाओं के पक्ष में कानून, नीति तथा अधिनियम बनाने एवं उनको व्यवहार में लाने के लिए किए गए प्रयासों की रिपोर्ट हर चार साल में संयुक्त राष्ट्र संघ की महिला समिति को सौंपता है। लिंग के आधार पर भेदभाव की गैर सरकारी संगठनों द्वारा पेश की गई रिपोर्ट के आधार पर महिलाओं के विरूद्ध हर प्रकार के भेदभाव के निषेध की समिति (सीईडीएडब्ल्यू) भारतीय प्रतिनिधि से संयुक्त राष्ट्र में प्रश्न पूछ सकती है। भारत जैसे बहुसांस्कृतिक देश में मानवाधिकारों के मुद्दों को इस प्रकार सदृश बनाना चाहिए जिससे मानवाधिकार सार्थक और अर्थवान बन सके।[3]

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि मानवाधिकारों से जुड़े कानून विश्व और जीवन के बीच निजीकरण के विभाजन को लागू करते हैं। राज्य के अतिरिक्त प्रयोग से जांच पड़ताल को स्वीकृत करके यह समुदाय और निजी जीवन में अंतर्राष्ट्रीय मानकों के बिना निरंतरता की पुष्टि करते हैं। उत्तरी अमेरिका, यूरोप और लैटिन अमेरिका की नारीवादी लॉबी घरेलू हिंसा, बलात्कार और यौन शोषण के मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित कर रही है। अन्य लॉबी जो इन प्रारंभिक विषयों पर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है जैसे– इस्लामी कानून के अंतर्गत जीवन व्यतीत करने वाली महिलाएँ जिनके अधिकारों का हनन धार्मिक कट्टरता के परिणामस्वरूप हो रहा है और यह एक गहन चिंता का विषय है। अंतिम रूप से यह दक्षिण पूर्वी एशिया और पूर्वी एशिया की लॉबी है जो बलात् वैश्यावृत्ति और देह व्यापार से संबंधित समस्याओं का निराकरण करती है। यह लॉबी क्षेत्रीय और राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर बहुत सक्रिय है।

इसी कड़ी में उल्लेखनीय है कि नारीवादी मानवाधिकारों के महत्वपूर्ण सिद्धांत का गहन विश्लेषण करते हैं। यह समानता का सिद्धांत मानवाधिकारों की पहचान के लिए पहला कदम है। नारीवादी इन प्रलेखों का निरीक्षण मानवाधिकारों की धारणा के साथ विषमता के मुद्दे को प्रकाश में लाने के लिए करते हैं– जो कि नारीवादी दृष्टिकोण का एक विशेष पहलू है और जिसका सिद्धांतिक रूप, नारीवादी लिंगभेद के विपरीत लैंगिक समानता को स्वीकार करता है और लिंगभेद पर आधारित विषमताओं को समाप्त करना पड़ता है। महिलाओं के अनुभव अलग हैं और उनके इन अनुभवों का सम्मान पुरूषों के विशेषाधिकारों का आश्रय लिए बिना करना चाहिए। मानवाधिकारों में सांस्कृतिक बहुलवाद के अंतर्गत चयन के विचार की समझ के लिए आवश्यक है। नारीवादी तर्क देते हैं कि बहुलवाद आवश्यक है परन्तु इसका निर्माण मानवाधिकारों की दृढ़ नींव पर आधारित होना चाहिए। महिलाओं के स्वैच्छिक नीति निर्माण और एकता तथा चुनाव की सुरक्षा की विविधता और महिलाओं के मानवाधिकारों की विषम परिस्थितियों के बीच सामंजस्य स्थापित करना चाहिए।[4]

जेंडर विमर्श राज्यों की आलोचना करने का एक सशक्त साधन है इस विषय को लगभग सार्वभौमिकता प्राप्त हो चुकी है और यह सर्वव्यापकता और वैधता की स्थिति को प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। फिर भी जहाँ तक महिला अधिकारों का संबंध है तो बहुत से राज्यों में परिवार और सामुदायिक संबंधों के संदर्भ में यह वास्तविक रूप से एक कमजोर विषय है।

राज्यों पर मानवाधिकारों को लागू करने के लिए कुछ बंधन लगाए जाते हैं परन्तु नव उदारवाद शक्तिशाली राज्य का विरोध करता है। इन परिस्थितियों के कारण अंतर्राष्ट्रीय समुदाय द्वारा कुछ असंबद्धता का नेतृत्व किया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकार एजेंसिया मानवाधिकारों को लागू करने के लिए राज्यों को उत्तरदायी बनाती हैं जबकि आर्थिक संस्थाओं को सरकारों पर मानवाधिकार लागू करने और अधिकारों के सरंक्षण करने विशेष रूप से सामाजिक और आर्थिक अधिकारों को लागू करने के कार्य को और अधिक मुश्किल बनाती है। हाल ही में संयुक्त संघ के प्रगतिशील कार्यक्रम के द्वारा अंतर्राष्ट्रीय विकास और मानवाधिकारों की नीतियों के एकीकरण करने के प्रयत्न किए गए हैं परन्तु यह प्रयत्न अभी तक अपर्याप्त ही सिद्ध हुए हैं।[5]

विश्व के प्रत्येक देश में महिलाओं के मानवाधिकारों का हनन होता है। लिंग भेद एक जैविक भेद है जबकि लिंग एक सामाजिक संरचना है। महिलाओं के साथ लिंग के आधार पर भेदभाव किया जाता है और उन्हें प्रताड़ित किया जाता है। लिंग जांच, भ्रूण हत्या, महिलाओं को बालिकाओं को जन्मने के लिए दोषी ठहराना, महिलाओं के साथ महिला होने के कारण शिक्षा तथा आहार में पक्षपात करना, महिलाओं के नीति–निर्माण की भूमिका से वंचित रखना, महिलाओं के साथ जघन्य अपराध जैसे– दहेज, हत्या, शोषण और बलात्कार इस प्रकार के भेदभाव के उदाहरण है। महिलाओं के साथ व्यवसाय को अपनाने के संबंध में भी भेदभाव किया जाता है। भारतीयों से अपने अस्तित्व की अवहेलना कर बच्चों का लालन–पालन करने वाली, घर को जोड़ने जैसे नैतिक मूल्यों की भूमिका को अपनाने पर बल दिया जाता है।

यद्यपि वैश्वीकरण के दौर में महिला सशक्तिकरण का ताना–बाना खड़ा किया जाता है, पर कुल मिलाकर देखें तो इसने औरतों पर काफी नकारात्मक प्रभाव डाला है। आज औरतों में उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रसार इस तरह से हो रहा है कि वे समझती हैं कि चंद उपभोक्तावादी वस्तुओं के बल पर, श्रृंगार प्रसाधनों द्वारा वे कुछ भी प्राप्त कर सकती हे। विभिन्न सौंदर्य प्रतियोगिताओं द्वारा इन वस्तुओं का मार्केट तैयार किया

जा रहा है तथा दूरदर्शन के विज्ञापनों द्वारा ऐसा प्रचार किया जा रहा है, मानों यदि वे इन वस्तुओं को अपना लें तो कहीं भी सफल हो जायेगी।

जैसा कि अभय कुमार दुबे का कहना है कि औरतों के निर्यातक देशों की आय के मुकाबले इनके आयातक देशों की प्रति व्यक्ति आय तकरीबन दोगुनी है तथा वे निर्यातक देश वही देश हैं जिन्होंने अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व बैंक की सलाह पर ढाँचागत समायोजन कार्यक्रमों को अपनाया था। वस्तुतः ये देश विदेशी पूंजी के आवागमन पर लगी बंदिशों को हटाकर वैश्वीकरण की प्रक्रिया में शामिल हुए किन्तु इस चक्कर में वे कर्ज के बोझ तले दबते चले गए और जब उन्हें कृषि एवं उद्योग के क्षेत्रों में कर्ज उठाने के लिए आवश्यक विदेशी मुद्रा नहीं मिल पा रही है तो वे डॉलर एवं पाउंड हासिल करने के लिए औरतों का निर्यात करने लगे हैं। सासिया साकेन इस देह व्यापार पर नजर डालते हुए लिखती हैं– ''.... संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि 1998 में चालीस लाख औरतों का निर्यात हुआ जिससे अपराधी गिरोहों ने सात अरब डॉलर का लाभ कमाया। इस रकम में वेश्याओं द्वारा भेजी जाने वाली रकमें और इस व्यापार के आयोजकों और व्यवस्थाओं को किया गया भुगतान भी शामिल है। पिछले कुछ वर्षों से जापान का यौन–उद्योग लगभग 4.2 खरब येन प्रति वर्ष अर्जित कर रहा है। पोलैंड में पुलिस का अनुमान है कि एक पोलिश औरत का निर्यात करने पर निर्यात कर्ता को सात सौ अमेरिका डॉलर मिलते हैं। आस्ट्रेलिया में संघीय पुलिस का अंदाजा है कि दो सौ औरतों के निर्यात से नौ लाख आस्ट्रेलियाई डॉलर प्रति सप्ताह को आमदनी होती है। यौन बाजार के उक्रेन एवं रूस की औरतों की कीमत बहुत ज्यादा है। उनकी तस्करी करके अपराधी गिरोह प्रति औसत पाँच सौ से एक हजार डॉलर कमा लेते हैं। इन औरतों से अपेक्षा की जाती है कि एक दिन में 15 ग्राहकों को संतुष्ट करके अपने गिरोह के लिए 21,500 डॉलर प्रतिमाह कमाएंगी।''[6]

आज सेक्स टूरिज्म के नाम पर व्यापक मात्रा में धन की उगाही की जा रही है। फिलीपींस में तो औरतों के निर्यात से प्राप्त होने वाली आय उसके विदेशी मुद्रा का तीसरा सबसे बड़ा स्रोत है। बंग्लादेश भी मध्य पूर्व जापान और यूरोपीय देशों में अपनी औरतों का निर्यात करता है एवं विदेशी मुद्रा का तीसरा हिस्सा सभी से प्राप्त करता है। एशियाई एवं अन्य गरीब देशों ने भी 1990 के दशक में उदारीकरण को तो अपना लिया लेकिन पूंजी के आवागमन पर से निर्बन्धनों को कमजोर करने का नतीजा यह हुआ कि ये देश आर्थिक संकट में फंसने लगे। अतः ऐसी स्थिति में धन की उगाही करने के लिए इन देशों में भी औरतों का व्यापार शुरू हुआ क्योंकि आर्थिक अवसरों के घटने से व्यक्ति, उद्यम, सरकार और अपराधी गिरोह आमदनी के अवैद्य और अनैतिक रास्ते अपनाने को मजबूर होते हैं। जैसा कि अभय कुमार दूबे[7] का कहना है कि ''औरत का ऐसा जघन्य अपमान किसी भी युग में नहीं हुआ। इससे पहले अनगिनत बार औरत व्यभिचार की शिकार हुई, उसे मात्र एक कोख में सीमित किया गया, वह पुरूष का वंश चलाने के लिए अभिशप्त रहीं, उसके श्रम का मूल्य उसे नहीं मिला, उसके ऊपर भयानक और सतत् हिंसा हुई, उसके यौनांगों को विकृत करके और तरह–तरह के नियम बनाकर उसकी यौनिकता को काबू में करने की कोशिशें की गयी, उसे मताधिकार भी सबके बाद मिला, कार्यस्थल पर उसका यौन–शोषण हुआ लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ कि अंतराष्ट्रीय स्तर पर बड़े और छोटे देशों ने अपने–अपने स्वार्थ में करोड़ों औरतों को आयात निर्यात की मंडी में बेचा–खरीदा हो। दास प्रथा में औरत के साथ मर्द भी बिकता था लेकिन वैश्वीकरण के इस दौर में औरतों को मर्द के बिकाऊपन से अलग करके विशेष रूप से बेचा जा रहा है। वह केवल अपने या अपने परिवार के लिए गुलामी नहीं कर रही है वरन् पूरे अर्थतंत्र के लिए गुलामी कर रही है। वह प्रवासी मजदूर है। नाचने, गाने और मनोरंजन के नाम पर उसका यौन–शोषण होता है। वधू बनाने के नाम पर वह यौन–दास है या सीधे–सीधे कॉलगर्ल के पेशे में लगी है या चकलाघरों में है। और ये सभी भूमिकाएँ उसे विदेशी जमीन पर अजनबी आबो–हवा में पूरी तरह आरक्षित होकर निभानी पड़ रही है।

अतः महिलाओं का यह व्यापार वैश्वीकरण की कलई खोलकर रख देता है। वैश्वीकरण के संदर्भ में यह भी तर्क दिया जाता है कि इसने महिलाओं को घर की चाहरदिवारी से बाहर निकालकर सार्वजनिक क्षेत्रों में रोजगार मुहैया कराया है। इससे पारिवारिक बंधन भी कमजोर हुआ है एवं उनका शोषण कम हुआ है। लेकिन जब वस्तुस्थिति पर नजर डालते हैं तो पाते हैं कि इसने महिलाओं के ऊपर और भी ज्यादा काम का बोझ डाल दिया है। आज महिलाओं के सदंर्भ में ''आजकल की नारी'' का विचार खड़ा किया जा रहा है। इस ''आजकल की नारी'' से काफी आशाएं रखी जाती है। वे ऑफिस का काम संभालने के साथ–साथ घर के भी सारे कार्यों को बखूबी निपटा लेती हैं एवं इस तरह की 'नारी' के विचार को मास–मीडिया द्वारा हवा दिया जा रहा है। इस प्रकार आज औरतों से आशा की जाती है कि वे ऑफिस के साथ–साथ घर के सभी सदस्यों की सेवा करके उन्हें खुश रखें। यहाँ तक कि आज जिस पावर वूमैन की बात की जाती है, उसकी भी स्थिति बहुत अच्छी नहीं है। अभय कुमार दूबे पेप्सी–कोला की महिला अध्यक्ष इंदिरा नूई का उदाहरण प्रस्तुत कर बताते हैं कि उन्हें भी रात को अपने बच्चों को सुलाने के बाद भी विस्तर नसीब होता है। कहने का तात्पर्य है कि आज ''पावर वूमेन'' भी अपनी पारंपरिक जिम्मेदारियों से मुक्त नहीं हो पाती हैं तथा चर–नारी के इस श्रम विभाजन को तोड़ पाने की बाजार के पास न तो कोई तकनीक है और न ही उसकी ऐसी इच्छा है।

इसके अलावा कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन शोषण भी बढ़ा है। अभय कुमार दूबे के अनुसार वैश्वीकरण कार्यस्थल ने महिलाओं को अपने पदोन्नति के खातिर भी अपने शरीर के इस्तेमाल करने के लिए प्रोत्साहित किया है। उन्होंने ब्रिटेन के एक सर्वेक्षण का उदाहरण प्रस्तुत किया है, जिसमें दफ्तरों में काम करनेवाली 28 प्रतिशत औरतों को शारीरिक संबंध बनाने पड़े तथा इसमें 65 प्रतिशत औरतों को इसका कोई खेद भी नहीं था। यह सर्वेक्षण न्यू वूमेन कंपनी, यूके नामक वेबसाइट द्वारा इंटरनेट पर लगभग 2000 कार्मिक

महिलाओं से बातचीत करके संपन्न किया गया। इसमें बताया गया है कि कार–पार्किंग में, बॉस की डेस्क पर, कैंटीन में और क्लॉक रूम में कितने प्रतिशत महिलाओं को यौन–क्रिया करनी पड़ी। इसमें लगभग 20 प्रतिशत महिला कर्मचारी अपनी पदोन्नति हेतु बॉस के साथ यौन–क्रिया करने के लिए तैयार भी मिली। अतः यह सर्वेक्षण दिखाता है कि किस प्रकार दफ्तर अपने आप में एक तरह से पोनोग्राफी का स्थल भी बन गया है।

इस सबके अतिरिक्त वैश्वीकरण का नकारात्मक प्रभाव यदि हमें देखना हो तो हम गाँव की असंगठित महिलाओं पर देख सकते हैं। चूंकि वैश्वीकरण की वजह से गाँव में रोजगार के अवसर कम हुए हैं, अतः मजदूरों का गाँव से शहर की ओर पलायन हुआ है। ऐसे में इन मजदूरों का परिवार गाँव में होता है जिसे चलाने की जिम्मेवारी महिलाओं की होती है। ये मजदूर शहरों में मजदूरी करके घर पैसे भेजते हैं जिनसे इनके परिवार का भरण–पोषण होता है लेकिन यदि किसी कारणवश ये पैसा नहीं भेज पाते हैं तो सारी जिम्मेवारी तो महिलाओं पर भी आ पड़ती है।

इस प्रकार से यद्यपि वैश्वीकरण के दौर में महिला सशक्तिकरण का ताना–बाना खड़ा किया जाता है, पर कुल मिलाकर देखें तो इसने औरतों पर काफी नकारात्मक प्रभाव डाला है। आज औरतों में उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रसार इस तरह से हो रहा है कि वे समझती है कि चंद उपभोक्तावादी वस्तुओं के बल पर, शृंगार प्रसाधनों द्वारा वे कुछ भी प्राप्त कर सकती है। विभिन्न सौंदर्य प्रतियोगिताओं द्वारा इन वस्तुओं का मार्केट तैयार किया जा रहा है तथा दूरदर्शन के विज्ञापनों द्वारा ऐसा प्रचार किया जा रहा है, मानो यदि वे इन वस्तुओं को अपना लें तो कहीं भी सफल हो जायेंगी। चाहे फेयर एण्ड लवली का विज्ञापण हो या सनसिल्क या पैंटीन शैंपू अथवा लेकमे की लिपिस्टिक, इनमें औरतों की सफलता के लिए इन वस्तुओं को ही क्रेडिट दिया जाता है। वैश्वीकरण ने एक ऐसी मिथ्या चेतना तैयार की है जिसमें औरतें स्वयं ही अपना शोषण करवाने एवं अपने–आपको वस्तु के रूप में अभिव्यक्त करने के लिए प्रवृत्त हो रही है। इस प्रकार इसने महिलाओं पर काफी नकारात्मक प्रभाव डाला है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया के चलते समस्त विश्व में अधिकतर महिलाएँ श्रमिक के रूप में हमारे सामने आई हैं। महिला श्रमिक के भीतर ही एक अत्यधिक शोषित महिला वर्ग भी है, इस शोषित वर्ग में अत्यधिक निर्धनता विद्यमान है। नीति निर्माण करने वाली संस्थाओं के भीतर और बाहर दोनों ही स्थानों पर महिलाएँ वैश्वीकरण से पीड़ित वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। इसी कारण वैश्वीकरण के इस दौर में महिलाओं का विकास एक मुख्य मुद्दा बन गया है। नैराबी (1985 में महिलाओं पर संयुक्त राष्ट्र संघ का विश्व सम्मेलन) और बीजिंग (1995 में महिलाओं पर संयुक्त राष्ट्रसंघ का विश्व सम्मेलन) दोनों ही जगह महिला अधिकारों को मानवाधिकारों के रूप में मान्यता प्रदान की गई। अंतराष्ट्रीय कानून की रूपरेखा के अन्तर्गत मानवाधिकार के साथ महिला अधिकारों का समर्थन, महिलाओं के विशेष मांग मानवाधिकारों की नीति में महत्वपूर्ण परिवर्तन के रूप में उदय हुआ। परन्तु फिर भी, महिला अधिकार अन्य क्षेत्रों की तुलना में अधिक कमजोर है। उनको लागू करने की कार्यवाही ढीली–ढाली है और संयुक्त राष्ट्र संघ से पर्याप्त आर्थिक सहायता भी प्राप्त नहीं होती। 1995 में महिलाओं के विकास पर आयोजित बीजिंग में तत्कालीन महासचिव बुतरस घाली ने अपने वक्तव्य में कहा कि महिलाओं पर हिंसा का प्रयोग एक सर्वव्यापक समस्या है और इसे वैश्विक स्तर पर अपराध घोषित किया जाना चाहिए। बीजिंग सम्मेलन के मुख्य प्रलेख में सरकारों ने घोषणा की कि महिलाओं के विरूद्ध हिंसा मौलिक अधिकारों का हनन है और यह समानता, विकास और शांति के लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग में एक बाधा है।

लिंग आधारित हिंसा का प्राथमिक कारण महिलाओं की परिवार और समाज में निम्न स्थिति का होना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के गहन शोध से सम्पूर्ण विश्व के 19 देशों का अध्ययन किया गया के अनुसार 16 प्रतिशत से 52 प्रतिशत महिलाओं का उनके अपने साथी द्वारा बलात्कार होता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट के अनुसार, प्रति आठ सैंकेंड में एक महिला का यौन शोषण तथा प्रति छः मिनट में एक महिला का बलात्कार होता है। संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे देशों में भी प्रबल नारीवादी आंदोलन निरन्तर जारी है। भारत में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रति 24 मिनट में एक महिला का यौन शोषण, प्रति 43 मिनट में अपहरण, प्रति 54 मिनट में बलात्कार का शिकार हो रही है। हाल ही में राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा किए सर्वेक्षण के अनुसार, उत्तराखंड क्षेत्र में 30 विवाहिता महिलाओं को उनके पतियों ने बालक शिशु पैदा न कर पाने की अक्षमता के कारण त्याग दिया। टाइम्स ऑफ इंडिया की वार्षिक रिर्पोट 2009 के अनुसार, राजधानी दिल्ली में 167 दहेज हत्या के मामले, 526 बलात्कार के मामले, 832 मामले पतियों द्वारा ससुरालियों द्वारा सताए जाने के मामले, 1649 छेड़छाड़ के मामले, 655 उत्पीड़न के मामले दर्ज थे। एमनेस्टी इंटरनेशनल की एक रिपोर्ट के अनुसार पूरे देश में पुलिस द्वारा महिलाओं का बलात्कार तथा दुर्यव्यवहार व्याप्त है। उत्तर पूर्वी क्षेत्र तथा जम्मू और कश्मीर में बागी सैनिकों के समर्थन से सेना तथा अर्धसैनिक बलों द्वारा महिलाओं का बलात्कार किया जाता है।[8]

अध्ययन का उद्देश्य

इस आलेख का उद्देश्य वैश्वीकरण के युग में एक तरफ महिलाओं के सशक्तिकरण ने महिलाओं के स्वतंत्रता, सोच और व्यवहार में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है वही दूसरी तरफ इनकी स्थितियों में काफी गिरावट भी आयी है जो काफी चिंताजनक विषय है। इन परिस्थितियों में इनके मानवाधिकार एवं दशाएँ कैसे प्रभावित हो रहे हैं इसका विस्तृत अध्ययन किया जाना है।

निष्कर्ष

पितृसत्ता भी महिलाओं के लिए घातक है। पुरूषों तथा उत्तरदायी भूमिका निभाने की धारणा ने महिलाओं की चिंता से संबंधित समस्याओं की ओर धकेल दिया है। महिलाओं की दोहरी भूमिका का सामना करना पड़ता है। उन्हें अपने व्यवसाय को भी करना होता है और घर में

अपनी घरेलू भूमिका भी अदा करनी पड़ती है। जिससे वह दोहरे तनाव के अन्तर्गत जीवन व्यतीत करती हैं जिसके परिणामस्वरूप महिलाओं में हृदय संबंधी बीमारियों में तेजी से वृद्धि हो रही है। आज महानगरों में 30 प्रतिशत से 40 प्रतिशत महिलाएँ इस बीमारी से पीड़ित हैं। समानता, न्याय और मानवाधिकारों पर आधारित एक समाज की स्थापना के लिए विकास की प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी अत्यावश्यक है।

अंत टिप्पणी

1. *चंद्रा, प्रकाश, इंटरनेशनल पॉलिटिक्स, विकास, न्यू दिल्ली, 1985*
2. *जॉहरी, जे.सी., इंटरनेशनल रिलेशन्स एण्ड पॉलिटिक्सः थियोरेटिकल पर्सपेक्टिव, स्टर्लिंग, न्यू दिल्ली, 1995*
3. *नरेश कुमार, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के बदलते आयाम, विशाल पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, 2007*
4. *सुशीला कौर, भूमंडलीकरण और अंतर्राष्ट्रीय राजनीतिः बदलता परिप्रेक्ष्य, ज्ञान पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली, 2011*
5. *चंद्रा, प्रकाश, इंटरनेशनल पॉलिटिक्स, पूर्वोक्त*
6. *दुबे, अभय कुमार (सं.) भारत का भूमंडलीकरण, वाणी प्रकाशन, सी.एस.डी.एस., नई दिल्ली, 2003*
7. *उपरोक्त*
8. *एमनेस्टी इंटरनेशनल का रिपोर्ट*